अति उच्च अगारनि बनी पगारनि जनु चिंतामणि नारि।
बहु शत मख-धूमनि-धूपित अंगन हरि की सी अनुहारि॥
बित्री वहु चित्रनि पर विचित्रनि केशवदास निहारि।
जनु विश्वरूप को अमल आरसी रची बिरंचि विचारि॥45॥

शब्दार्थ—अगारनि = महल। पगारनि = परकोटा। नारि = समूह। शत = सैकड़ों। मख-धूमनि-धूपित = यज्ञों के धुआँ से रंगे (काले) हुए। अंगन = आँगन। हरि = विष्णु। अनुहारि = समान। आरसी = दर्पण, शीशा। विरंचि = ब्रह्मा।

प्रसंग—इस छन्द में कवि केशव ने बताया है कि अयोध्यावासी नित्त नियम से हवन करते थे और उनके घर अनेक प्रकार के चित्रों से चित्रित थें।

व्याख्या—अयोध्या में अत्यन्त ऊँचे महलों पर परकोटे बने हुऐ थे जो चिंतामणि के समूह की भाँति चमक रहे थे। उनके बहुत से आँगन सैकड़ों यज्ञों के धुएँ से काले बनकर विष्णु के रूप के समान दिखाई पड़ रहे थे। उनकी दीवारों पर तरह-तरह के

विचित्र चित्र बने हुए थे। केशव कवि कहते हैं कि उन चित्रों को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो विश्व का रूप देखने के लिए ब्रह्मा ने अयोध्या के रूप में स्वच्छ दर्पण की रचना की हो।

अलंकार—उत्प्रेक्षा, उपमा, अनुप्रास।